**ओ३म्**

**‘धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष का साधक सर्वमान्य व सार्वभौमिक वैदिक धर्म’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

आजकल किसी मत प्रर्वतक द्वारा चलाये गये मत को धर्म कहने की परम्परा चल पड़ी है। धर्म किसी वस्तु के गुणों को कहते हैं जैसे कि अग्नि का मुख्य धर्म या गुण अन्य वस्तुओं वा पदार्थों को अपने ताप से जलाना होता है। अग्नि से प्रकाश भी उत्पन्न होता है। दर्शन में अग्नि का गुण रूप को कहा गया है। इसी प्रकार वायु का मौलिक गुण स्पर्श तथा जल का शीतलता है जो इनके धर्म ही कहे जाते हैं। यह उनके गुण वा धर्म सदा इनके साथ रहते हैं। सृष्टि के आरम्भ से 2 अरब वर्ष लगभग व्यतीत होने पर भी यह गुण यथावत् अर्थात् अपरिवर्तनीय हैं। भौतिक पदार्थों की तरह ही, मनुष्यों के यथार्थ गुण सद्ज्ञान, सद्कर्म, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी ईश्वर की ध्यान, चिन्तन, मनन द्वारा स्तुति, प्रार्थना द्वारा उपासना करना, यज्ञ-अग्निहोत्र करना, दया, करूणा, अंहिसा, प्रेम, छलकपट रहित जीवन, सत्य का प्रचार-प्रसार व असत्य का निवारण आदि गुण, कर्म व स्वभाव भी सभी मनुष्यों के सर्वत्र अर्थात् सर्व भूगोल में होने होने चाहियें। इन गुणों व उनके पूरक गुण, कर्म व स्वभाव को ही सत्य धर्म की संज्ञा दी जा सकती है। इसी प्रकार सत्य बोलना, परोपकार करना, दूसरों की सेवा करना, विद्यार्जन करना, माता-पिता-आचार्य-अतिथि आदि की सेवा करना, ईश्वर की भक्ति व उपासना करना, वेदों व वैदिक ग्रन्थों का स्वाध्याय करना, न्याय करना, पक्षपात न करना, दुष्टों के बल का क्षय करना, स्वास्थ्यप्रद शाकाहारी भोजन करना व समय पर सोना, जागना और प्राणायाम व व्यायाम आदि से शरीर को स्वस्थ व निरोग रखना, धार्मिक सज्जन लोगों की रक्षा व सहायता करना, सन्तानों को अच्छे संस्कार देना, छुआछूत व भेदभाव न करना व दूसरे करने वालों को समझाना व रोकना आदि गुणों को हम मानव धर्म की संज्ञा दे सकते हैं। सम्प्रति संसार में जितने मत वा धर्म हैं, वह अपवाद को छोड़कर इन आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए नहीं दीखते अलबत्ता सभी बड़े-बड़े दावे अर्थात् अपनी-अपनी आत्म-प्रशंसा सभी करते हैं। सब अपने-अपने अनुयायियों को अपने मत प्रवर्तक की शिक्षाओं को आंखे बन्द करके पालन करने का आदेश व निर्देश देते हैं। एक आध को छोड़ कर प्रायः सभी खुले व गुप्त रूप से प्रचार करते हैं कि वह मान्यतायें जैसी हैं ठीक है, उस पर विचार नहीं किया जा सकता, उन्हें उसी रूप में मानना ही उनके मतानुयायी का परम धर्म व कर्तव्य हैं। ऐसा ही हो रहा है। अपने अपने मत प्रवर्तक व धर्मगुरू की आज्ञा को देश, काल व परिस्थिति के अनुसार संशोधित रूप में मानने की किसी मत के अनुयायी को स्वतन्त्रता नहीं है। वेद मत से इतर मतों में किसी भी मत व सम्प्रदाय के अनुयायियों को अपने मत की किसी मान्यता पर शंका करने व उसका समुचित उत्तर व समाधान पाने का अधिकार भी नहीं है। यदि वह यह सुविधा अपने ज्ञानी, बुद्धिमान, अनुभवी व विवेकी अनुयायियों को दे दें तो पूरी सम्भावना है कि उन मतों का अस्तित्व ही खतरे में पड़ जायेगा। इसी डर से यह सुविधा अन्यान्य मतों के अनुयायियों को उनके रहनुमा नहीं देते हैं। यह सुविधा अर्थात् धार्मिक विषयों में अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता केवल वेद मत व इसके अनुयायियों को ही प्राप्त है।

**मनमोहन कुमार आर्य**

वेदेतर मतावलब्यिों को यह स्वतन्त्रता नहीं है कि वह अपने मत प्रवर्तक व अपनी मत पुस्तकों की शिक्षाओं की देश-काल-परिस्थितियों के अनुसार अध्ययन कर समीक्षा करें और जो अपने मत व दूसरे मत में पक्षपात व भेदभाव करती हैं व जिससे किसी अन्य मत के व्यक्तियों की भावनाओं को ठेस पहुंचती हैं, उस मान्यता पर पुनर्विचार कर उसे सत्य व असत्य, हित व अहित, हानि व लाभ आदि की दृष्टि से विचार कर संशोधित व परिवर्तित करें और यदि उसे हटाना भी पड़े तो हटाने पर विचार व निर्णय कर सकें। ऐसा कोई उदाहरण हमारे सामने नहीं है। यह सभी मत-मतान्तर मध्यकाल में उस समय स्थापित व आरम्भ हुए जब ज्ञान व विज्ञान नाम मात्र का था व इसके विपरीत अज्ञान व अन्धविश्वासों की भरमार थी। इसी कारण अर्थात् समय के प्रभाव से मध्यकाल में उत्पन्न सभी मत-मतान्तरों में अज्ञान व अन्धविश्वास आदि प्रचुरता व प्रधानता से पाये जाते हैं जिनका दिग्दर्शन हमें स्वामी दयानन्द ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में कराया है। इससे यह भी ज्ञात होता है कि मध्यकालीन अज्ञान व अन्धविश्वासों से युक्त कोई भी मत आज की परिस्थितियों में सर्वांश में मान्य न होने के कारण विश्व धर्म अर्थात् विश्व के प्रत्येक मनुष्य के धर्म की अर्हता कदापि नहीं रखता।

 विश्व धर्म कौन वा कैसा हो सकता है? पहले तो हमें धर्म को समझना होगा। धर्म का कुछ उल्लेख हमने उपर्युक्त पंक्तियों में किया है। इसे धर्म की मूल भावना व स्वरूप कह सकते हैं। अब सर्वांगपूर्ण धर्म पर विचार करते हैं। सर्वांगपूर्ण मानव धर्म वह होगा जिससे किसी मनुष्य वा प्राणी का किसी भी रूप में अहित न होता है। धर्म का मुख्य पहलू यह भी है जो हमें यह बतायें कि वस्तुतः हम क्या हैं, हमारा अस्तित्व व इससे जुड़े सभी प्रश्नों के उत्तर हमें मिलें जो पूरी तरह निभ्र्रान्त हों। मनुष्य, जीवात्मा, ईश्वर व सृष्टि के अस्तित्व से जुड़े प्रश्नों के उत्तर ऐसे होने चाहियें जिनकी सत्यता को वैज्ञानिक भी स्वीकार करें। धर्म की मान्यतायें ऐसी हों जो हमें हमारा अस्तित्व व सत्ता का पूरा ज्ञान कराने के साथ इस संसार का रचयिता, संचालक व व्यवस्थापक तथा प्रलयकत्र्ता और उत्पत्तिकर्ता कौन है, उसका भी सत्य, युक्ति, तर्क व बुद्धि से स्वीकार्य विज्ञानपूर्वक उत्तर प्रदान करे। प्रकृति क्या है, यह नित्य है या अनित्य, अनुत्पत्तिधर्मा है या उत्पत्तिधर्मा आदि अनेकानेक प्रश्नों का भी सत्य धर्म में सन्तोषजनक उत्तर मिलना चाहिये। बच्चे के रूप में जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त तक का जो हमारा जीवन होता है उसमें हमारे सभी कर्तव्यों के पथ प्रदर्शन का कार्य भी धर्म को ही करना होता है, उसका भी पूरा मार्ग दर्शन मत व धर्म पुस्तकों में उपलब्ध होना चाहिये। ऐसी अनेकानेक बातें हैं जो धर्म के अन्तर्गत आती हैं। क्या इन सबका पूर्ण समाधान वर्तमान किसी एक वा अनेक मतों व धर्मों से होता है। हमें लगता है कि ऐसा नहीं होता, सभी अपने आप में अपूर्ण, अच्छी व बुरी बातों से युक्त, विज्ञान की दृष्टि से रहित, मनुष्यों में भेदभाव, पक्षपात व अन्याय करने वाले, अपने-अपने मत वा धर्म के प्रचार व प्रसार में अच्छी व बुरी बातों व तौर-तरीकों का प्रयोग करने वालें हैं। अतः यह सभी विश्व धर्म होने की अर्हता नहीं रखते।

अब प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या प्रचलित मत वा धर्मों में से किसी मत या धर्म में विश्व धर्म होने की क्षमता व सामथ्र्य है? इसका उत्तर है कि चार वेद और उनके अनुकूल प्राचीन काल में निर्मित उपनिषद, दर्शन, विशुद्ध मनुस्मृति, सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका, संस्कार विधि, आयुर्वेद व ज्योतिष आदि के ग्रन्थों में यह सामर्थ्य है। वेद की शिक्षायें विश्व भर के सभी मनुष्यों के लिए एक समान हैं। कहीं किसी से पक्षपात का कोई उल्लेख व संकेत नहीं है। वेद संसार के सभी मनुष्यों की समानता का सन्देश देते हैं। सबको शिक्षा का अधिकार है एवं उन्नति के समान अवसर उपलब्ध है। अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता व निर्भयता है। वेदों की प्रत्येक मान्यता विश्व के सभी मनुष्यों के लिए हितकारी व कल्याणप्रद हैं तथा वेद की सम्पूर्ण ज्ञानराशि मनुष्यों की सभी समस्याओं का समाधान करने में समर्थ व सक्षम है। वेद संसार का एकमात्र ऐसा ग्रन्थ है जिसमें ईश्वर, जीवात्मा व प्रकृति का सत्य-सत्य वर्णन हैं। वेदों के अनुसार ईश्वर सत्य, चित्त व आनन्दस्वरूप है। वह निराकार, सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, प्रकाशस्वरूप, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र, सृष्टिकर्त्ता, पक्षपातरहित, न्यायकारी, माता-पिता-आचार्य के समान पालन कत्र्ता, दयालु आदि गुण-कर्मो व स्वभाव वाला है। इसी प्रकार से जीव चेतन पदार्थ, सूक्ष्म, नित्य पदार्थ, अविनाशी, अजर, अमर, अनुत्पन्न, कर्म-फल में बन्धा हुआ, वेद ज्ञान, ईश्वरोपासना, ध्यान, समाधि, यज्ञ, सेवा, सत्संग, परोपकार, स्वाध्याय आदि से मोक्ष को प्राप्त करने वाला है। प्रकृति इन दोनों सत्ताओं से भिन्न एक अति सूक्ष्म व जड़ पदार्थ होने के साथ ईश्वर के अधीन है। अभी तक वेदों के बारे में जितना ज्ञान उपलब्ध है, वेद सारे विश्व के सभी मनुष्यों का एक समान धर्म रखने की पूरी अर्हता रखते हैं। इसके सामने सभी मत-मतान्तर अत्यन्त अपूर्ण, लघु व छोटे हैं। सभी मतों के ग्रन्थों का अन्य पुस्तकों की भांति सभी मतों के अनुयायियों को अधिकाधिक अध्ययन करना चाहिये और उसकी उपयोगी शिक्षाओं को अपने जीवन में स्थान देकर उससे लाभ उठाना चाहिये। परन्तु यहां भी यह तथ्य सम्मुख होता है कि वेद में सभी विद्याओं व मनुष्यों के कर्तव्यों व कर्मों का विधान होने से इनका अध्ययन कर लेने से सभी प्रकार ज्ञान प्राप्त हो जाता है, अतः अन्यत्र श्रम की आवश्यकता नहीं है। सभी मतों के अनुयायियों को न्यूनतम ईश्वर, जीवात्मा व सृष्टि के यथार्थ स्वरूप को जानकर वेद विधि पूर्वक स्तुति-प्रार्थना-उपासना व यज्ञ आदि कर्मों को करके जीवन में पुण्य कर्मों का संचय कर जीवन को सफल बनाना चाहिये जिससे इस जीवन में व भविष्य काल वा मरणोत्तर काल में नये जीवन अर्थात् पुनर्जन्म, जो कि सभी प्राणियों का अवश्यम्भावी है, उसमें दुःख रूप योनियों में जाने से बच कर श्रेष्ठ मानव व देव योनियों को प्राप्त की सकें। वेद, उपनिषद, दर्शन, मुनस्मृति, सत्यार्थ प्रकाश, संस्कार विधि आदि ग्रन्थों का अध्ययन करने पर हम इसी निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि न केवल वेद व वैदिक साहित्य में संसार के सभी मनुष्यों का सच्चा धर्म पुस्तक होने की योग्यता है अपितु यह अपने सर्वहितकारी व सर्वकलयाणमय होने के कारण यथार्थ विश्व धर्म स्वतः हैं। इसके प्रमाण की आवश्यकता नहीं है। सूर्योदय होने पर किसी को कहा नहीं जाता कि सूर्योदय हो गया है, वह सबको विदित हो जाता है। इसी प्रकार वेदों का आर्विभाव होने से सबको यह ज्ञात है कि संसार के ग्रन्थों में मनुष्यों का सर्वहितकारी व सर्वमान्य धर्म वेद ही है। जो लोग इसको मानते व जानते हैं वह लाभ प्राप्त कर रहें हैं और जो किसी भी कारण वेदाध्ययन व वेदों के आचरण से दूर हैं, वह अपनी भारी हानि कर रहे हैं।

 हम अनुभव करते हैं कि संसार के सभी लोगों को वेद के सत्य स्वरूप को जानने के लिए महर्षि दयानन्द रचित सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कार विधि, आर्याभिविनय आदि ग्रन्थों का अध्ययन करना चाहिये। इससे उन्हें स्वयं सत्यासत्य को बोध हो जायेगा। इसके बाद वेद मत को मानने न मानने में वह अपने हित -अहित को जानकर यथोचित निर्णय कर सकते हैं। हम सभी को अपने जीवन के कल्याण के लिए पक्षपातशून्य होकर महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों का अध्ययन करने का आमंत्रण देते हैं। ऐसा करने पर उन्हें अभ्युदय व निःश्रेयस का बोध होकर इनकी प्राप्ति के उपायों व साधनों का ज्ञान हो जायेगा और वह अपने विवेक से इनकी प्राप्ति के प्रयास कर सकते हैं।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**